

12-मनःस्थिति बदले, तो परिस्थिति बदले

अध्याय 1: युग-धर्म का परिपालन अनिवार्य

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: समय के साथ बदलना क्यों आवश्यक है?

उत्तर: समय के साथ बदलना इसलिए आवश्यक है क्योंकि परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं। जो पुरानी प्रथाओं पर अड़ा रहता है, उसे न केवल घाटा उठाना पड़ता है, बल्कि वह उपहास का पात्र भी बनता है।

2. प्रश्न: लेखक ने समय के साथ होने वाले परिवर्तनों के क्या उदाहरण दिए हैं?

उत्तर: लेखक ने कई उदाहरण दिए हैं, जैसे:

- बच्चों के कपड़ों का किशोरों और फिर प्रौढ़ों के लिए अनुपयुक्त होना।
- प्राचीन काल के अनगढ़ औजारों की जगह अब आग्नेयास्त्रों का प्रयोग होना।
- खेती के लिए कुदाली की जगह सुधरे हुए हलों और मशीनों का उपयोग।
- लकड़ियाँ घिसकर आग जलाने की जगह माचिस का प्रयोग।
- खपरोँ पर लिखने की जगह कागज और छपाई का उपयोग।

3. प्रश्न: क्या धर्मशास्त्र भी समय के साथ बदलते हैं? कैसे?

उत्तर: हाँ, धर्मशास्त्र भी समय की मर्यादाओं में बँधे रहे हैं। बदलते समय और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भिन्न-भिन्न ऋषियों ने स्मृतियों और सूत्र ग्रंथों को नए सिरे से लिखा, ताकि वे उस युग के लिए प्रासंगिक बने रहें।

4. प्रश्न: "लकीर के फकीर" बने रहने का क्या अर्थ है और इसका क्या परिणाम होता है?

उत्तर: "लकीर के फकीर" बने रहने का अर्थ है पुरानी परिपाटी या प्रथा पर बिना सोचे-समझे अड़े रहना। इसका परिणाम यह होता है कि व्यक्ति प्रगति नहीं कर पाता और समाज में उपहास का पात्र बनता है।

5. प्रश्न: मनुष्य की प्रगति का आधार क्या रहा है?

उत्तर: मनुष्य की प्रगति का आधार युग-धर्म को अपनाना और समय के साथ होने वाले परिवर्तनों को स्वीकार करना रहा है। वह सृष्टि के आदि से लेकर आज तक अनेक परिवर्तनों से गुजरकर ही विकसित हुआ है।

6. प्रश्न: प्राचीन काल में लोग निवास के लिए क्या करते थे और अब क्या करते हैं?

उत्तर: प्राचीन काल में लोग जमीन में गड्ढा खोदकर गुफाएँ बनाते थे, बाद में कुटिया बनाने लगे। अब भूमि की कमी के कारण सीमेंट और लोहे के सहारे बहुमंजिला भवन बनाते हैं। कुछ लोग तो यह भी आग्रह कर सकते हैं कि पूर्वजों की तरह गुफा बनाकर ही रहना चाहिए।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: "युग-धर्म" से लेखक का क्या तात्पर्य है और इसे पहचानना क्यों अनिवार्य है?

उत्तर: "युग-धर्म" से लेखक का तात्पर्य समय की माँग और बदलती परिस्थितियों के अनुरूप अपने विचारों, मान्यताओं और क्रियाकलापों में आवश्यक परिवर्तन लाना है। इसे पहचानना इसलिए अनिवार्य है क्योंकि जो समय के इस तकाजे को नहीं समझता, वह पिछड़ जाता है, उसे हानि उठानी पड़ती है और वह प्रगति नहीं कर सकता।

2. प्रश्न: लेखक के अनुसार कौन सी चीजें शाश्वत हो सकती हैं और किनमें परिवर्तन आवश्यक है?

उत्तर: लेखक के अनुसार, नीति-निष्ठा एवं समाज-निष्ठा जैसी नैतिक मान्यताएँ शाश्वत हो सकती हैं, लेकिन रीति-रिवाजों, क्रियाकलापों, उपकरणों और प्रचलित नियम-अनुशासन में समय के साथ परिवर्तन आवश्यक है।

3. प्रश्न: "आवश्यकता आविष्कार की जननी है" - इस उक्ति को अध्याय में दिए गए उदाहरणों से कैसे सिद्ध किया गया है?

उत्तर: इस उक्ति को ईंधन के उदाहरण से सिद्ध किया गया है। जब लकड़ी और गोबर की कमी हुई तो गोबर गैस और खनिज गैस का आविष्कार हुआ। जहाँ और साधन थे, वहाँ बिजली और खनिज तेल का प्रयोग हुआ और अब सूर्य की धूप को भी ईंधन के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। यह दिखाता है कि जैसे-जैसे आवश्यकताएँ बदलीं, नए-नए आविष्कार होते गए।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: यदि कोई समाज या व्यक्ति परिवर्तन को स्वीकार करने से इनकार कर दे, तो उसके दूरगामी परिणाम क्या हो सकते हैं?

उत्तर: यदि कोई समाज परिवर्तन को स्वीकार करने से इनकार कर दे तो वह न केवल आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़ जाएगा, बल्कि दुनिया में अलग-थलग पड़कर उपहास का पात्र भी बन जाएगा। उसकी प्रगति रुक जाएगी और वह जीवित रहने के लिए संघर्ष करेगा, क्योंकि बाकी दुनिया नई तकनीकों और विचारों के साथ आगे बढ़ चुकी होगी। पुरातन के लिए हठवादी बने रहना किसी के लिए भी हितकारी नहीं हो सकता।

2. प्रश्न: क्या किसी भी पुरानी प्रथा पर केवल इसलिए अड़े रहना बुद्धिमानी है क्योंकि वह हमारे पूर्वजों की थी? लेखक के तर्कों के आधार पर विश्लेषण करें।

उत्तर: नहीं, लेखक के अनुसार किसी भी भली-बुरी प्रथा को केवल पूर्वजों की प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर उस पर अड़े रहना बुद्धिमानी नहीं है। मनुष्य एक प्रगतिशील प्राणी है जो आदिकाल से आज तक परिवर्तनों को अपनाकर ही विकसित हुआ है। रीति-रिवाजों और क्रियाकलापों में समय के अनुसार बदलाव आवश्यक है, और यह मानना कि पुराने समय में जो होता था, उसमें कोई बदलाव नहीं होना चाहिए, यह अधर्म है, यह

सोच गलत है।

अध्याय 2: गरीबों द्वारा अमीरी का आडम्बर

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: भारत आए विदेशी दार्शनिक और शिष्टमंडल ने यहाँ के समाज के बारे में क्या टिप्पणी की?

उत्तर: रोम के दार्शनिक ने कहा कि "भारत में जहाँ गरीब अधिकांश रहते हैं, वहाँ भी अमीरों जैसा स्वाँग बनाया जाता है।" जापानी शिष्टमंडल ने कहा कि "यहाँ अमीरी का माहौल है, परन्तु उसकी छाया में पिछड़े, गए-गुजरे लोग रहते हैं।"

2. प्रश्न: लेखक के अनुसार मनुष्य की वास्तविक सम्पदा क्या है?

उत्तर: लेखक के अनुसार, मनुष्य की वास्तविक सम्पदा उसका निजी व्यक्तित्व है। यदि व्यक्तित्व जीवंत हो तो वह अपने लिए हर प्रकार की सम्पदा उत्पन्न कर सकता है।

3. प्रश्न: हमारे देश में बड़प्पन का अर्थ क्या माना जाता है?

उत्तर: हमारे देश में बड़प्पन का अर्थ आलस्य और अपव्यय माना जाता है। मेहनत करने को दुर्भाग्य का चिह्न समझा जाता है और जिन्हें कुछ न करने की सुविधा हो, उन्हें अमीर या मालदार समझा जाता है।

4. प्रश्न: अमीरी के प्रदर्शन के लिए लोग क्या-क्या करते हैं?

उत्तर: अमीरी के प्रदर्शन के लिए लोग फैशन, जेवर, ठाट-बाट और नशेबाजी जैसे दुर्व्यसन अपनाते हैं। विवाह-शादियों में वे अपनी आवश्यक चीजों को बेचकर भी फिजूलखर्ची करते हैं और दूल्हा-दुल्हन को राजकुमार-राजकुमारी की तरह सजाते हैं।

5. प्रश्न: लेखक ने खाली समय का सदुपयोग करने के लिए क्या सुझाव दिए हैं?

उत्तर: लेखक ने सुझाव दिया है कि खाली समय को कठोर श्रम के साथ नियोजित किया जा सकता है। कृषि कार्य करने वाले लोग कुटीर उद्योगों में समय लगा सकते हैं। जिन्हें पैसे की तंगी नहीं, वे इस समय को शिक्षा बढ़ाने, स्वच्छता लाने, परिवार को सभ्य बनाने, स्वास्थ्य रक्षा, और कला-कौशल सीखने जैसे कामों में लगा सकते हैं।

6. प्रश्न: गरीबी और पिछड़ेपन का मुख्य कारण क्या है?

उत्तर: गरीबी और पिछड़ेपन का मुख्य कारण प्रगतिशीलों में पाए जाने वाले सद्गुणों का अभाव और अमीरों के दुर्गुणों (जैसे कामचोरी, अपव्यय) का जन-जन में विद्यमान होना है। अमीरी प्रदर्शन का उन्माद और उपलब्ध क्षमताओं का सदुपयोग न करने की मानसिकता ही हमें दरिद्रता और अशिक्षा से बाहर नहीं निकलने देती।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: "व्यक्तित्व अनायास ही नहीं बन जाता है। वह इर्द-गिर्द के वातावरण से अपने लिए प्राणवायु खींचता है।" इस कथन का क्या आशय है?

उत्तर: इस कथन का आशय है कि व्यक्ति का चरित्र और उसकी क्षमताएं उसके आसपास के माहौल से बहुत प्रभावित होती हैं। जैसे प्रदूषित हवा में सांस लेना मुश्किल है, वैसे ही नकारात्मक और पिछड़े हुए सामाजिक वातावरण में एक मजबूत और प्रगतिशील व्यक्तित्व का निर्माण होना कठिन है। व्यक्तित्व के विकास के लिए एक उत्साहवर्धक और प्रेरणादायक माहौल आवश्यक है।

2. प्रश्न: लेखक ने "अमीरी प्रदर्शन के प्रेत-पिशाच" की संज्ञा किसे दी है और यह समाज की प्रगति में कैसे बाधक है?

उत्तर: लेखक ने यह संज्ञा उस मानसिकता को दी है जो लोगों को अपनी वास्तविक आर्थिक स्थिति के विपरीत अमीरों की तरह दिखने और खर्च करने के लिए मजबूर करती है। यह समाज की प्रगति में बाधक है क्योंकि इसके कारण लोग अपनी मेहनत और समय का सदुपयोग नहीं कर पाते, फिजूलखर्ची (अपव्यय) करते हैं और अपनी क्षमताओं को विकसित करने की बजाय केवल दिखावे में उलझे रहते हैं, जिससे दरिद्रता और पिछड़ापन बना रहता है।

3. प्रश्न: विपन्नता से उबरने के लिए सबसे पहले किस चीज को बदलने की आवश्यकता है?

उत्तर: विपन्नता से उबरने के लिए सबसे पहले उस अभ्यस्त मानसिकता को बदलने की आवश्यकता है जो हमें अमीरी का मुखौटा पहनकर वास्तव में पिछड़ी हुई परिस्थितियों में रहने के लिए मजबूर करती है। हमें कामचोरी, अपव्यय और दिखावे की आदत छोड़कर मेहनत और समय के सदुपयोग की ओर बढ़ना होगा।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: भारत में गरीबी के साथ-साथ "अमीरी का माहौल" क्यों दिखाई देता है? इस विरोधाभास के गहरे सामाजिक और मनोवैज्ञानिक कारणों का विश्लेषण करें।

उत्तर: यह विरोधाभास इसलिए है क्योंकि भारतीय समाज में बड़प्पन और प्रतिष्ठा को आलस्य, अपव्यय और ठाट-बाट से जोड़ा गया है। लोग गरीब होते हुए भी सामाजिक प्रतिष्ठा पाने के लिए शादी-ब्याह जैसे मौकों पर अपनी हैसियत से बढ़कर खर्च करते हैं ताकि वे अमीर दिखें। इसके पीछे एक गहरी मनोवैज्ञानिक वजह सामाजिक दबाव और यह गलत धारणा है कि परिश्रम छोटे लोगों का काम है और आराम बड़प्पन की निशानी है। इसी कारण, साधनों की कमी के बावजूद दिखावे की प्रवृत्ति बनी रहती है।

2. प्रश्न: लेखक के अनुसार, यदि बाहरी संपत्ति (जैसे धन-दौलत) दे भी दी जाए, तो भी समाज का पिछड़ापन क्यों दूर नहीं हो सकता?

उत्तर: लेखक के अनुसार, केवल बाहरी संपत्ति से पिछड़ापन दूर नहीं हो सकता क्योंकि असली समस्या लोगों के व्यक्तित्व और मानसिकता में है। जैसे बंजर भूमि पर बीज बोने से फसल नहीं उगती, वैसे ही यदि लोगों में कामचोरी, गंदगी, अशिक्षा और अपव्यय जैसे दुर्गुण भरे हों तो कोई भी बाहरी सहायता स्थायी प्रगति नहीं ला सकती। वास्तविक प्रगति के लिए पहले व्यक्तित्व रूपी भूमि को उपजाऊ बनाना, यानी सद्गुणों को अपनाना आवश्यक है।

अध्याय 3: तीनों उद्यान फलेगे और निहाल करेंगे

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: लेखक ने मनुष्य के पास मौजूद तीन उद्यान कौन-से बताए हैं?

उत्तर: लेखक ने मनुष्य के पास तीन उद्यान बताए हैं - शरीर, मन और अंतःकरण।

2. प्रश्न: पहला उद्यान 'शरीर' को कैसे विकसित किया जा सकता है?

उत्तर: शरीर रूपी उद्यान को श्रम, समय के सुनियोजन, अभिरुचि, उत्साह और मनोयोग से विकसित किया जा सकता है। मेहनत और ईमानदारी की कमाई से ही दरिद्रता दूर होती है।

3. प्रश्न: दूसरा उद्यान 'शिक्षा' या 'बुद्धिमत्ता' कैसे प्राप्त की जा सकती है?

उत्तर: दूसरा उद्यान शिक्षा, यदि उसके महत्व को समझकर उत्साह जगाया जाए तो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी प्राप्त की जा सकती है। संसार के अधिकांश मनीषी कठिनाइयों से जूझते हुए ही आगे बढ़े हैं।

4. प्रश्न: लेखक ने जेल में अंग्रेजी सीखने वाले साथी का उदाहरण क्यों दिया?

उत्तर: यह उदाहरण यह दिखाने के लिए दिया गया है कि यदि व्यक्ति के भीतर प्रबल इच्छाशक्ति और उमंग हो, तो साधनों के अभाव में भी ज्ञान (विद्या) अर्जित किया जा सकता है। उस व्यक्ति ने लोहे के तसले और कंकड़ से लिखना सीखा।

5. प्रश्न: तीसरा उद्यान 'अंतःकरण' क्या है और इसे विकसित होने से कौन सी चीज रोकती है?

उत्तर: तीसरा उद्यान अंतःकरण है, जिसमें भाव-संवेदनाएं होती हैं। संकीर्ण स्वार्थपरता और निष्ठुरता जैसी बाधाएं इसे विकसित होने से रोकती हैं।

6. प्रश्न: क्या महान बनने के लिए विद्वान या पहलवान होना आवश्यक है?

उत्तर: नहीं, महान बनने के लिए विद्वान या पहलवान होना आवश्यक नहीं है। कबीर, दादू, रैदास, मीरा जैसे संतों ने अपनी भाव-संवेदनाओं और उदारता के आधार पर महानता प्राप्त की थी।

7. प्रश्न: आज की सबसे बड़ी और भयावह समस्या क्या है?

उत्तर: लेखक के अनुसार, आज की सबसे बड़ी समस्या मानवी चेतना का परावलम्बन (दूसरों पर निर्भर होना), अंतःस्फुरणा का मूर्छित होना और सही-गलत को न समझ पाना है।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: "हराम का माल हजम नहीं होता" - इस कहावत का लेखक के विचारों के संदर्भ में क्या अर्थ है?

उत्तर: इसका अर्थ है कि जो संपत्ति बिना परिश्रम या अनीति से कमाई जाती है, उसका सदुपयोग करना लगभग असंभव होता है। जैसे बिना मेहनत किया भोजन नहीं पचता, वैसे ही बिना मेहनत की कमाई व्यक्ति को आलसी, अपव्ययी और दुर्गुणी बनाती है और अंततः वह संपत्ति नष्ट हो जाती है या अनर्थ का कारण बनती है।

2. प्रश्न: परावलम्बन व्यक्ति और समाज की प्रगति में कैसे बाधा डालता है?

उत्तर: परावलम्बन व्यक्ति के स्वतंत्र चिंतन की क्षमता को खत्म कर देता है। व्यक्ति दूसरों का केवल ऊटपटांग अनुकरण करता है और सही-गलत का निर्णय लेने का साहस खो देता है। इस कारण वह अपने तीनों उद्यानों (शरीर, मन, अंतःकरण) को विकसित नहीं कर पाता और दीन-हीन बना रहता है, जो समाज की सामूहिक प्रगति में भी बाधक बनता है।

3. प्रश्न: "वातावरण मनुष्य को बनाता है, यह उक्ति गये-गुजरे लोगों पर ही लागू होती है।" इस कथन का विश्लेषण करें।

उत्तर: इस कथन का अर्थ है कि केवल कमजोर इच्छाशक्ति वाले और परावलम्बी लोग ही परिस्थितियों और वातावरण के दास होते हैं। इसके विपरीत, आत्मबल के धनी व्यक्ति अपनी संकल्प-शक्ति और प्रतिभा के सहारे अपने लिए इच्छित वातावरण स्वयं बना लेते हैं। वे परिस्थितियों को अपने अनुकूल ढालने की क्षमता रखते हैं।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: लेखक ने शरीर, मन और अंतःकरण को "खदान" क्यों कहा है? इस रूपक के माध्यम से वे क्या गहरा संदेश देना चाहते हैं?

उत्तर: लेखक ने इन्हें "खदान" इसलिए कहा है क्योंकि जैसे खदान के अंदर बहुमूल्य खनिज छिपे होते हैं और उन्हें परिश्रम से निकालना पड़ता है, वैसे ही मनुष्य के शरीर, मन और अंतःकरण में असीम क्षमताएं (मणिमुक्तक) छिपी हुई हैं। संदेश यह है कि ये क्षमताएं अपने आप प्रकट नहीं होतीं; इन्हें पुरुषार्थ, श्रम, उत्साह और साधना से बाहर निकालना पड़ता है। बाहरी मदद या भाग्य पर निर्भर रहने वाला व्यक्ति (कुपात्र) इन खदानों से कुछ भी हासिल नहीं कर पाता।

2. प्रश्न: उज्ज्वल भविष्य के निर्माण के लिए परावलम्बन को छोड़कर आत्मावलम्बन अपनाना क्यों सबसे महत्वपूर्ण शर्त है?

उत्तर: उज्ज्वल भविष्य का निर्माण किसी बाहरी सहायता या चमत्कार से नहीं, बल्कि व्यक्ति के अपने पुरुषार्थ से होगा। परावलम्बन व्यक्ति को विवेकहीन, साहसहीन और निष्क्रिय बना देता है। जब तक व्यक्ति अपनी आंतरिक शक्तियों को पहचान कर आत्मावलम्बी नहीं बनेगा, वह अपने शरीर, मन और अंतःकरण की शक्तियों का विकास नहीं कर पाएगा। आत्मावलम्बी बनकर ही लोग ओजस्वी, तेजस्वी और वर्चस्वी बन सकते हैं, और ऐसे प्रबुद्ध नागरिक ही एक उज्ज्वल भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

अध्याय 4: दुरुपयोग के रहते अभाव कैसे मिटे?

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: विभूतियों (सम्पदाओं) के अर्जन और सदुपयोग में क्या अंतर है?

उत्तर: विभूतियों को अर्जित करना एक बात है, लेकिन उनका सही प्रयोजनों में उपयोग करना बिल्कुल दूसरी बात है। बहुत से लोग संपत्ति जमा कर लेते हैं, पर उसका सदुपयोग करने वाले बहुत कम मिलते हैं।

2. प्रश्न: समर्थ और सम्पन्न लोग अक्सर अपनी शक्तियों का उपयोग कैसे करते हैं?

उत्तर: अक्सर समर्थ और सम्पन्न लोग अपनी शक्तियों का दुरुपयोग करते हैं। वे उद्वेगता अपनाते हैं, अनाचार करते हैं, और अपने वैभव का उपयोग शोषण, उत्पीड़न और पतन का माहौल बनाने में करते हैं।

3. प्रश्न: लेखक ने चाकू का उदाहरण क्यों दिया है?

उत्तर: लेखक ने यह समझाने के लिए चाकू का उदाहरण दिया है कि साधनों का अभाव उतना खतरनाक नहीं है जितना उनका दुरुपयोग। चाकू न होने पर सब्जी किसी और चीज से काटी जा सकती है, पर यदि वही चाकू पेट में घोंप दिया जाए तो वह जानलेवा हो जाता है। इसी तरह, संपत्ति का दुरुपयोग अभाव से भी ज्यादा विनाशकारी है।

4. प्रश्न: पुरातन काल को "सतयुग" क्यों कहा जाता था, जबकि तब साधन कम थे?

उत्तर: पुरातन काल को "सतयुग" इसलिए कहा जाता था क्योंकि तब साधन कम होने के बावजूद लोग "मिल बाँटकर खाने" की नीति अपनाते थे। इससे समाज में प्रसन्नता और सहकारिता का भाव था, और किसी को अभाव महसूस नहीं होता था।

5. प्रश्न: मनुष्य की वास्तविक आवश्यकताएं कैसी हैं? उसे हैरान कौन करता है?

उत्तर: मनुष्य की वास्तविक आवश्यकताएं बहुत कम हैं, जिन्हें साधारण श्रम से पूरा किया जा सकता है। उसे तृष्णा हैरान करती है, जिसके पीछे दुरुपयोग की लालसा जुड़ी होती है।

6. प्रश्न: अनाचार की वृद्धि का मूल कारण क्या है?

उत्तर: अनाचार की वृद्धि का मूल कारण है - अनावश्यक सजावट, विलासिता और संग्रह की लिप्सा। इसी के

कारण व्यक्ति दूसरों का हक छीनने लगता है और साधनों का दुरुपयोग करता है। संक्षेप में, इसका मूल कारण "बटोरना और बिखेरना" (दुरुपयोग करना) है।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: लेखक के अनुसार, गए-गुजरे (गरीब) लोग समर्थों की तुलना में कम हानिकारक क्यों हैं?

उत्तर: गरीब लोग किसी की बहुत भलाई नहीं कर सकते क्योंकि वे अपनी ही समस्याओं में उलझे रहते हैं, लेकिन वे किसी का बड़ा अनर्थ भी नहीं कर पाते। इसके विपरीत, तथाकथित समर्थ लोग (विद्वान, सत्ताधारी) जब अपनी शक्तियों का दुरुपयोग करते हैं, तो वे अपनी छोटी सी चिनगारी को दावानल बनाकर पूरे समाज को जला सकते हैं और व्यापक विनाश कर सकते हैं।

2. प्रश्न: "बुद्धिजीवियों, वैज्ञानिकों और कलाकारों को पैसे के बल पर खरीदा और कठपुतली की तरह नचाया गया है।" इस कथन से लेखक समाज की किस गंभीर समस्या की ओर इशारा कर रहे हैं?

उत्तर: इस कथन से लेखक समाज की उस गंभीर समस्या की ओर इशारा कर रहे हैं जहाँ प्रतिभा और विवेक पर धन हावी हो गया है। बुद्धिमान और प्रतिभाशाली लोग, जो समाज को सही दिशा दे सकते थे, वे भी धनवानों के हाथों बिक गए हैं। वे अब लोकोपयोगी कार्य करने की बजाय अपने अन्नदाताओं (पैसे वालों) के स्वार्थों की पूर्ति के लिए काम करते हैं, जिससे समाज में छल, प्रपंच और विनाश बढ़ता है।

3. प्रश्न: अपव्ययी व्यक्ति दुर्गुणी क्यों बन जाता है? इस प्रक्रिया को समझाएं।

उत्तर: अपव्ययी व्यक्ति इसलिए दुर्गुणी बन जाता है क्योंकि जब उसकी निजी आवश्यकताएं पूरी हो जाती हैं, तब भी वह और अधिक उपार्जन करता रहता है। उदारता के अभाव में वह इस अतिरिक्त धन को अच्छे कामों में नहीं लगा पाता। तब उसके पास इस धन को खर्च करने का एकमात्र रास्ता दुरुपयोग ही बचता है - जैसे विलासिता, नशा, अहंकार का प्रदर्शन। यह दुरुपयोग ही उसे धीरे-धीरे अन्य दुर्गुणों की ओर धकेल देता है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: "काश, प्रतिभा और सदाशयता का एक ही केन्द्र पर केन्द्रीकरण बन पड़ा होता।" इस पंक्ति में छिपी गहरी वेदना और एक आदर्श समाज की कल्पना को स्पष्ट करें।

उत्तर: इस पंक्ति में लेखक की गहरी वेदना इस बात को लेकर है कि समाज में शक्ति (प्रतिभा, धन) और सद्भावना (सदाशयता) का मेल नहीं है। जिनके पास प्रतिभा और साधन हैं, वे अक्सर उनका दुरुपयोग करते हैं, और जिनके मन में अच्छे विचार हैं, वे साधनहीन हैं। लेखक एक ऐसे आदर्श समाज की कल्पना कर रहे हैं जहाँ शक्तिशाली व्यक्ति सदाचारी भी हो। यदि ऐसा होता, तो दुनिया में कोई दुःख या पिछड़ापन नहीं रहता और यह संसार बहुत सुखी और समुन्नत होता।

2. प्रश्न: क्या समस्याओं का मूल कारण साधनों की कमी है या उनका दुरुपयोग? अध्याय के आधार पर तर्कपूर्ण उत्तर दें।

उत्तर: अध्याय के अनुसार, समस्याओं का मूल कारण साधनों की कमी नहीं, बल्कि उनका दुरुपयोग है। लेखक तर्क देते हैं कि मनुष्य की वास्तविक जरूरतें बहुत कम हैं और प्रकृति में उन्हें पूरा करने के लिए पर्याप्त साधन हैं। पुरातन काल में कम साधनों में भी लोग सुखी थे क्योंकि वे मिल-बाँटकर रहते थे। आज अधिक साधन होने पर भी असंतोष और संकट इसलिए हैं क्योंकि लोगों में संग्रह, विलासिता और अपव्यय की प्रवृत्ति बढ़ गई है। यही दुरुपयोग अनाचार को जन्म देता है। यदि दुरुपयोग रुक जाए, तो अभाव अपने आप मिट जाएगा।

अध्याय 5: साधनों से भी अधिक सद्गुणों की आवश्यकता सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: आसजन (ज्ञानी लोग) "सौ हाथों से कमाने" के साथ-साथ "हजार हाथों से खर्च करने" का निर्देश क्यों देते हैं?

उत्तर: वे ऐसा निर्देश इसलिए देते हैं ताकि कमाए गए धन का उपयोग संचय या दुर्व्यसनों में न हो, बल्कि उसे सदाशयता भरे प्रगतिशील और अच्छे कार्यों में नियोजित किया जा सके।

2. प्रश्न: लेखक के अनुसार, बिना परिश्रम का कमाया हुआ धन अनर्थ क्यों उत्पन्न करता है?

उत्तर: लेखक के अनुसार, बिना परिश्रम का कमाया हुआ धन पारे की तरह होता है जो पचता नहीं है। वह व्यक्ति को आरामतलब, निकम्मा और दुर्गुणी बनाता है और अंततः गलत परम्पराओं को जन्म देकर अनर्थ ही उत्पन्न करता है।

3. प्रश्न: दरिद्रता और अशिक्षा का मूल कारण क्या है?

उत्तर: दरिद्रता और अशिक्षा का मूल कारण आलस्य और उत्साह का अभाव है। इन्हीं दोष-दुर्गुणों के कारण व्यक्ति पिछड़ी स्थिति में पड़ा रहता है और अभावों का दबाव सहता है।

4. प्रश्न: श्रमिकों की अच्छी कमाई के बावजूद वे अभावों की शिकायत क्यों करते रहते हैं?

उत्तर: वे अभावों की शिकायत इसलिए करते हैं क्योंकि वे अपनी कमाई को नशेबाजी, जुआ और आवारागर्दी जैसी बुरी आदतों में गँवा देते हैं। इस दुरुपयोग के कारण वे हमेशा अभाव में जीते हैं।

5. प्रश्न: किसी व्यक्ति को महामानवों की पंक्ति में कौन से दो कदम पहुँचाते हैं?

उत्तर: पहला कदम है कठोर प्रयत्न करके समर्थता अर्जित करना, और दूसरा कदम है उन उपलब्धियों को उदारतापूर्वक अच्छे कार्यों के लिए नियोजित कर देना।

6. प्रश्न: लेखक ने कौन से तीन गुणों को उन्नति का आधार बताया है?

उत्तर: लेखक ने उदारता, प्रामाणिकता और परमार्थ-परायणता को उन्नति का आधार बताया है, जिनसे व्यक्ति

स्वयं सुखी होता है और उससे जुड़ा समाज भी आगे बढ़ता है।

7. प्रश्न: गरीब देशों के लोग समर्थ होते हुए भी पिछड़ी परिस्थितियों में क्यों रहते हैं?

उत्तर: इसका मुख्य कारण व्यक्तित्व की गहराई में बसी हुई अवांछनीयताएं (बुरी आदतें) हैं, जिसके कारण या तो वे पर्याप्त उत्पादन नहीं कर पाते या फिर जो कमाते हैं उसे अस्त-व्यस्तता के कारण गँवा देते हैं।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: क्या साधनों का अभाव ही प्रगति में सबसे बड़ी बाधा है? अध्याय के आधार पर तर्क दें।

उत्तर: नहीं, अध्याय के अनुसार साधनों का अभाव प्रगति में सबसे बड़ी बाधा नहीं है। असली बाधा व्यक्तित्व की कमियां और सद्गुणों का अभाव है। लेखक तर्क देते हैं कि सद्गुणी और सेवाभावी लोग कम साधनों में भी हँसते-हँसाते जीवन जी लेते हैं और दूसरों को भी आगे बढ़ाते हैं, जबकि साधन-सम्पन्न लोग भी दुर्गुणों के कारण दुखी और पिछड़े रह जाते हैं। गरीबी किसी के मार्ग में बाधक नहीं होती, मात्र कुपात्रता ही उसकी आड़ में छिपकर पतन का माहौल बनाती है।

2. प्रश्न: लेखक क्यों कहते हैं कि उज्ज्वल भविष्य के निर्माण के लिए सम्पदा जुटाने से पहले लोगों की मानसिकता बदलना आवश्यक है?

उत्तर: लेखक ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि यदि लोगों की मानसिकता घटिया (स्वार्थी, दुर्गुणी) रहेगी, तो कितने भी साधन या सम्पदा क्यों न जुटा ली जाए, उसका सदुपयोग नहीं हो पाएगा। घटिया मानसिकता के साथ इच्छित और उपयुक्त समाज का निर्माण हजारों वर्षों में भी संभव नहीं हो सकेगा।

3. प्रश्न: "खुले तेजाब को कोई कपड़ों में लपेट कर नहीं रखता।" इस उपमा के माध्यम से लेखक अनावश्यक संचय के बारे में क्या समझाना चाहते हैं?

उत्तर: इस उपमा के माध्यम से लेखक यह समझाना चाहते हैं कि जिस प्रकार खुला तेजाब कपड़ों को जला देता है, उसी प्रकार अनावश्यक रूप से और बिना परिश्रम का संचित धन भी व्यक्ति और समाज के लिए विनाशकारी होता है। यह धन व्यक्ति में दुर्गुण पैदा करता है, ईर्ष्या उभारता है और पतन की ओर धकेलता है, इसलिए इसे जमा करके नहीं रखना चाहिए।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: इतिहास में साधु, ब्राह्मण और परिव्राजकों जैसे साधनहीन समुदायों ने कैसे देश-विदेश में सर्वतोमुखी सम्पन्नता का वातावरण बनाया? इससे हम आज क्या सीख सकते हैं?

उत्तर: इन साधनहीन समुदायों ने अपने सद्गुणों, आदर्शवादिता और शालीनता के बल पर ऐसा किया। वे स्वयं सदाचार का जीवन जीते थे और दूसरों को भी प्रगति के लिए प्रेरित करते थे। इससे हम यह सीख सकते हैं कि वास्तविक परिवर्तन और प्रगति का आधार भौतिक साधन नहीं, बल्कि चारित्रिक और नैतिक उत्कृष्टता

है। यदि आज समाज में ऐसे आदर्शवादी लोग बढ़ें, तो कम साधनों में भी एक बेहतर दुनिया का निर्माण संभव है।

2. प्रश्न: "अभावग्रस्त परिस्थितियों के कारण मनुष्य को त्रास सहने पड़ते हैं" - लेखक इस आम धारणा से असहमत क्यों हैं और इसके पीछे क्या गहरा सत्य उजागर करते हैं?

उत्तर: लेखक इस आम धारणा से असहमत हैं क्योंकि उनका मानना है कि यह अधूरा सत्य है। गहराई से निरीक्षण करने पर पता चलता है कि परिस्थितियाँ व्यक्ति के व्यक्तित्व का परिणाम होती हैं। वास्तव में व्यक्तित्व की गहराई में घुसी हुई अवांछनीयताओं (जैसे आलस्य, नशा, अपव्यय) के कारण ही मनुष्य गई-गुजरी परिस्थितियों में पड़ा रहता है। अतः, त्रास का मूल कारण बाहरी परिस्थितियाँ नहीं, बल्कि भीतरी दुर्गुण हैं, जिन्हें हटाकर व्यक्ति अपनी स्थिति बदल सकता है।

अध्याय 6: उदारता अपनाई जाये

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: लेखक ने सम्पत्ति की तुलना दुधारी तलवार से क्यों की है?

उत्तर: सम्पत्ति की तुलना दुधारी तलवार से की गई है क्योंकि यदि इसका सदुपयोग हो तो यह रक्षा कर सकती है, लेकिन यदि दुरुपयोग हो तो यह अपनी और दूसरों की हत्या का कारण भी बन सकती है।

2. प्रश्न: संसार में इतनी धन-सम्पदा होने के बावजूद लोग सुखी क्यों नहीं हैं?

उत्तर: क्योंकि इस सम्पदा का उपयोग विलास, अहंकार के प्रदर्शन और संचय में हो रहा है। यदि इसे मिल-बाँटकर उपयोग किया जाता तो सभी लोग सुख-शांति से रह सकते थे।

3. प्रश्न: लेखक के अनुसार सम्पदा रूपी उन्मत्त हाथी पर किस चीज का अंकुश आवश्यक है?

उत्तर: सम्पदा रूपी उन्मत्त हाथी पर उदारता का अंकुश आवश्यक है, अन्यथा वह विनाश का कारण बनेगी।

4. प्रश्न: मनुष्य को सामाजिक प्राणी क्यों कहा गया है? और उसे समाज का ऋण क्यों चुकाना चाहिए?

उत्तर: मनुष्य को सामाजिक प्राणी इसलिए कहा गया है क्योंकि उसकी शुरू से अंत तक की सारी प्रगति जन सहयोग के आधार पर ही संभव हुई है। चूँकि उसने समाज से पाया है, इसलिए कृतज्ञता के तौर पर उसे यह ऋण चुकाना भी चाहिए।

5. प्रश्न: "कमाने वाला ही खाये" की नीति को यदि मान्यता मिल जाए तो संसार पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

उत्तर: यदि इस नीति को मान्यता मिल गई तो संसार में अबोध, अविकसित, अपंग और असमर्थ लोगों को जीवित रहने का अधिकार नहीं रहेगा। दुनिया में सिर्फ शोषक और शोषित वर्ग रह जाएगा और भेड़ियों जैसा माहौल बन जाएगा।

6. प्रश्न: दान कब धर्म होता है और कब अधर्म?

उत्तर: जब दान का उपयोग भाव संवेदनाओं और विचार परिष्कार (अच्छे विचारों को बढ़ाने) में होता है, तब वह धर्म है। लेकिन जब वह धूर्तों और गलत लोगों को दिया जाता है, तो वह अधर्म बन जाता है।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: लेखक के अनुसार, यदि हर कोई केवल अपने लिए ही उपार्जन करेगा तो इसका समाज पर क्या दूरगामी और भयंकर परिणाम होगा?

उत्तर: यदि यह प्रचलन बना रहा तो समाज में केवल दो वर्ग रह जाएंगे - शोषक और शोषित। सहकारिता, सहभागिता और समानता जैसे मानवीय मूल्य समाप्त हो जाएंगे। इससे अराजकता फैलेगी, जिसमें समर्थ असमर्थ को पीस डालेगा। यह स्थिति मानवी गरिमा को समाप्त कर देगी और समाज में सिर्फ संघर्ष और अनर्थ ही शेष रह जाएगा।

2. प्रश्न: 'मत्स्य न्याय' क्या है और यह मानव समाज के लिए क्यों अनुपयुक्त है?

उत्तर: 'मत्स्य न्याय' का अर्थ है 'बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है', यानी समर्थ द्वारा असमर्थ का शोषण। यह मानव समाज के लिए इसलिए अनुपयुक्त है क्योंकि मनुष्य को देवत्व का उत्तराधिकारी माना गया है और उसकी श्रेष्ठता सहकारिता, उदारता और एक-दूसरे की सहायता करने में है, न कि एक-दूसरे को नष्ट करने में। यदि मानव समाज में भी यही न्याय चलेगा तो मानवीय गरिमा समाप्त हो जाएगी।

3. प्रश्न: उज्ज्वल भविष्य के निर्माण के लिए दान की भूमिका क्या है, और इसे कैसे प्रभावी बनाया जा सकता है?

उत्तर: उज्ज्वल भविष्य के निर्माण के लिए दान की भूमिका महत्वपूर्ण है, लेकिन यह दान केवल धन का नहीं होना चाहिए। इसका प्रभावी नियोजन तब होता है जब इसे लोगों के मन-मस्तिष्क में आदर्शवादी भाव-संवेदनाएं जगाने और उनके विचारों को परिष्कृत करने में लगाया जाए। केवल इसी वैचारिक और भावनात्मक दान से ही एक बेहतर समाज का निर्माण संभव है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: अध्याय के अनुसार, व्यक्तिगत सम्पत्ति की अवधारणा सामाजिक प्रगति में कैसे बाधक बन सकती है? एक आदर्श व्यवस्था कैसी होनी चाहिए?

उत्तर: व्यक्तिगत सम्पत्ति की अवधारणा तब बाधक बनती है जब व्यक्ति यह भूल जाता है कि वह एक सामाजिक प्राणी है और उसकी प्रगति में समाज का योगदान है। जब वह केवल अपने उपार्जन को निजी स्वामित्व समझकर विलासिता और अहंकार में खर्च करता है तो समाज में शोषण और असमानता बढ़ती है। एक आदर्श व्यवस्था वह है जिसमें व्यक्ति कमाये, पर उसे समाज की धरोहर समझे और उसे मिल-जुलकर

उपयोग करे, जैसा कि एक परिवार में होता है। गिरों को उठाने और उठों को आगे बढ़ाने की प्रक्रिया अपनाकर ही सच्ची प्रगति संभव है।

2. प्रश्न: लेखक ने विभिन्न धर्मों में दैनिक अनुदान की परम्परा (जैसे गोग्रास, जकात) का उल्लेख क्यों किया है? इसके पीछे छिपा गहरा दार्शनिक संदेश क्या है?

उत्तर: लेखक ने इन परम्पराओं का उल्लेख यह बताने के लिए किया है कि उदारता और परमार्थ केवल विशेष अवसरों के लिए नहीं, बल्कि दैनिक जीवन का एक अनिवार्य अंग होना चाहिए। इसके पीछे गहरा दार्शनिक संदेश यह है कि मनुष्य की श्रेष्ठता केवल कमाने में नहीं, बल्कि बांटने में है। तंगी और व्यस्तता के बावजूद अपनी सम्पदा और समय का एक अंश नियमित रूप से परमार्थ के लिए निकालना मानवी गरिमा को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। यह हमें याद दिलाता है कि हम अकेले नहीं, बल्कि एक बड़े समाज का हिस्सा हैं।

अध्याय 7: मन: स्थिति बदले, तो परिस्थिति बदले

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: संसार में किन दो प्रमुख विचारधाराओं का संघर्ष हमेशा से चला आ रहा है?

उत्तर: पहली विचारधारा मानती है कि साधनों की अधिकता से ही प्रगति और प्रसन्नता संभव है। दूसरी विचारधारा मानती है कि मन:स्थिति ही परिस्थितियों की जन्मदाता है और उसी से साधनों का उपार्जन और सदुपयोग संभव होता है।

2. प्रश्न: 'देवासुर संग्राम' का दार्शनिक अर्थ क्या है?

उत्तर: 'देवासुर संग्राम' का दार्शनिक अर्थ भौतिकता और आध्यात्मिकता के बीच का संघर्ष है। दैत्य पक्ष पदार्थ को ही सब कुछ मानता है (भौतिकता), जबकि देव पक्ष भावनाओं और विचारों को प्रधानता देता है (आध्यात्मिकता)।

3. प्रश्न: दैत्य पक्ष हमेशा विग्रह (झगड़े) में क्यों उलझा रहा?

उत्तर: क्योंकि वे न केवल देव पक्ष से लड़ते रहे, बल्कि अनीति से प्राप्त की गई उपलब्धियों और लूट में अधिक हिस्सा पाने की प्रवृत्ति के कारण आपस में भी छीना-झपटी और लड़ाई में उलझे रहे।

4. प्रश्न: लेखक ने रंगीन चश्मे का उदाहरण क्यों दिया है?

उत्तर: यह समझाने के लिए कि जैसे रंगीन चश्मा पहनने पर दुनिया वैसी ही दिखती है, वैसे ही हमारी गलत सोच (मन:स्थिति) के कारण परिस्थितियाँ खराब दिखती हैं। समस्या का हल बाहरी दुनिया को बदलने में नहीं, बल्कि अपनी सोच (चश्मा उतारने) में है।

5. प्रश्न: मानवी गरिमा के साथ जुड़ा हुआ शिष्टाचार क्या है?

उत्तर: मानवी गरिमा से जुड़ा शिष्टाचार है - स्वयं को नीति और अनुशासन में रखना तथा दूसरों के साथ उदार व्यवहार करना। इसके तहत घर में बालकों, वृद्धों और असमर्थों की व्यवस्था पहले की जाती है।

6. प्रश्न: यदि लोगों ने अपना स्वार्थी दृष्टिकोण बदल दिया होता तो यह दुनिया कैसी होती?

उत्तर: यदि लोगों ने अपना दृष्टिकोण बदला होता और पिछड़ों को उनका हक दिया होता, तो यह दुनिया प्रसन्नता और सम्पन्नता से भरी होती और यहाँ सतयुगी या स्वर्गीय वातावरण होता।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: "मनःस्थिति ही परिस्थितियों की जन्मदात्री है।" इस कथन को अध्याय के तर्कों के आधार पर सिद्ध करें।

उत्तर: अध्याय के अनुसार, यदि मनःस्थिति सही हो, यानी उसमें संयम, संतोष और सहानुभूति हो, तो कम साधनों में भी सुख से रहा जा सकता है। इसके विपरीत, यदि मनःस्थिति खराब (लालची, स्वार्थी) हो, तो पर्याप्त साधन होने पर भी अभाव और असंतोष बना रहता है। जैसे रंगीन चश्मा उतारने से दुनिया का असली रंग दिखता है, वैसे ही सोच बदलने से समस्याएँ हल हो सकती हैं। अंत में लेखक स्पष्ट करते हैं कि समस्याओं का एकमात्र समाधान मनःस्थिति में व्याप्त अवांछनीयता को खत्म करना ही है।

2. प्रश्न: भौतिकवादी (दैत्य) विचारधारा वाले लोग अधिक साधन संपन्न होते हुए भी देव विचारधारा वालों से अधिक घाटे में क्यों रहते हैं?

उत्तर: वे अधिक घाटे में इसलिए रहते हैं क्योंकि उनकी 'सब कुछ हड़प लेने' की प्रवृत्ति उन्हें निरंतर संघर्ष, छीना-झपटी और आपसी विग्रह में उलझाए रखती है। वे उन्मादी हाथियों की तरह लड़कर न केवल अपना अपयश कराते हैं और आत्म-प्रताड़ना में जलते हैं, बल्कि अपने आसपास के शांतिपूर्ण वातावरण को भी नष्ट कर देते हैं। वे न खुद चैन से रहते हैं, न दूसरों को रहने देते हैं।

3. प्रश्न: प्रकृति में सभी के लिए पर्याप्त साधन होने के बावजूद आपाधापी और संघर्ष क्यों मचा हुआ है?

उत्तर: यह संघर्ष इसलिए मचा है क्योंकि लोगों में 'हविश' यानी अत्यधिक लालच है। वे संसार की हर चीज को अपने छोटे से कटोरे में भर लेना चाहते हैं। वे यह नहीं समझते कि प्रकृति का वैभव सबके लिए है और सबको अपनी-अपनी भागीदारी से संतुष्ट रहना चाहिए। इसी हक छीनने की प्रवृत्ति के कारण संघर्ष होता है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. प्रश्न: अध्याय में 'देवता' और 'दैत्य' केवल पौराणिक पात्र नहीं, बल्कि दो तरह की जीवन-दृष्टि हैं। इन दोनों जीवन-दृष्टियों का आज के समाज में टकराव कहाँ-कहाँ दिखाई देता है? विश्लेषण करें।

उत्तर: आज के समाज में यह टकराव हर जगह दिखाई देता है। 'दैत्य' दृष्टि उन लोगों और राष्ट्रों में है जो केवल आर्थिक विकास, उपभोग और शक्ति-संचय को ही प्रगति मानते हैं। वे प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध शोषण

करते हैं और दूसरों का हक छीनने में नहीं हिचकते, जिससे युद्ध, असमानता और पर्यावरण विनाश होता है। 'देव' दृष्टि उन लोगों में है जो सहयोग, संतोष, नैतिकता और पर्यावरण संरक्षण को महत्व देते हैं। यह टकराव कॉर्पोरेट लालच बनाम सामाजिक कल्याण, अनियंत्रित औद्योगिकीकरण बनाम सतत विकास, और व्यक्तिगत स्वार्थ बनाम सार्वभौमिक भाईचारे के रूप में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

2. प्रश्न: यदि समस्याओं का मूल कारण मनःस्थिति है, तो इसे बदलने का सबसे कारगर तरीका क्या हो सकता है? अध्याय के प्रकाश में अपने विचार रखें।

उत्तर: अध्याय के अनुसार, मनःस्थिति को बदलने का सबसे कारगर तरीका अपनी सोच के चश्मे को उतारकर यथार्थ को स्वीकार करना है। इसका व्यावहारिक उपाय है - आत्मानुशासन और उदारता का अभ्यास। व्यक्ति को यह समझना होगा कि वह सृष्टि का केंद्र नहीं है और प्रकृति के संसाधनों पर सबका बराबर का हक है। जब व्यक्ति अपनी अनिवार्य आवश्यकताएं पूरी करके बाकी को समाज की भलाई के लिए लगाना सीखता है, तभी उसकी मनःस्थिति बदलती है। इसके लिए आत्म-चिंतन, नैतिक शिक्षा और ऐसे आदर्शों को जीवन में उतारना आवश्यक है जो 'स्व' से ऊपर उठकर 'सर्व' के हित की बात करें, क्योंकि अंततः मानसिकता में उत्कृष्टता लाए बिना कोई भी बाहरी समाधान विफल होगा।

अध्याय 8: परिवर्तन का आधार तो ढूँढ़ें

सरल स्तर के प्रश्न (5-10)

1. प्रश्न: लेखक ने स्वर्ग और नरक की तुलना किससे की है?

उत्तर: लेखक ने स्वर्ग और नरक की तुलना एक ही घर के दो दरवाजों से की है। एक दरवाजे से घुसने पर गंदगी (नरक) मिलती है और दूसरे से घुसने पर स्वच्छता और सुगन्धि (स्वर्ग)।

2. प्रश्न: बाहरी चोट की तुलना में भीतरी चोट (अंतरात्मा का कचोटना) अधिक असहनीय क्यों होती है?

उत्तर: क्योंकि बाहरी चोट से तो बचा भी जा सकता है, पर जब अंतरात्मा ही धिक्कारती है, तो उस पीड़ा से बचना असंभव हो जाता है।

3. प्रश्न: मनुष्य और पशु-पक्षियों के बीच मुख्य अंतर क्या है?

उत्तर: पशु-पक्षियों के लिए कोई नीति-मर्यादा नहीं होती, जबकि मनुष्य विशेष उपलब्धियों के साथ जन्मा है और उसकी गरिमा के कारण उस पर विशेष जिम्मेदारियों और मर्यादाओं का पालन आवश्यक हो जाता है।

4. प्रश्न: मनुष्य प्रकृति के साथ कैसा व्यवहार कर रहा है?

उत्तर: मनुष्य उसी प्रकृति का विनाश करने पर तुला है जिसने उसे जीवन दिया है। वह भूगर्भ का अत्यधिक

खनन कर उसे बाँझ बना रहा है, जलाशयों और वायुमंडल को प्रदूषित कर रहा है, जिससे पृथ्वी का रक्षा कवच फट रहा है।

5. प्रश्न: लेखक ने मनुष्य की तुलना बिच्छू से क्यों की है?

उत्तर: क्योंकि जैसे बिच्छू के बच्चे अपनी माँ का पेट खाकर ही बाहर निकलते हैं, वैसे ही मनुष्य उस प्रकृति का सर्वनाश कर रहा है जो उसके जीवन का आधार है।

6. प्रश्न: आज मनुष्य का मनुष्य के प्रति कैसा व्यवहार हो गया है?

उत्तर: मनुष्य का मनुष्य के प्रति व्यवहार निराशाजनक हो गया है। अविश्वास का ऐसा माहौल है कि व्यक्ति को अपनी छाया से भी डर लगता है। लोग प्रेत-पिशाचों की तरह एक-दूसरे को काटने, जलाने पर उतारू हैं।

7. प्रश्न: लेखक के अनुसार सभी समस्याओं का एकमात्र समाधान क्या है?

उत्तर: सभी समस्याओं का एकमात्र समाधान है - मनःस्थिति में व्याप्त अवांछनीयता (बुराई) को पूरी तरह से बुहार फेंकना और मानसिकता को आदर्शवादी उत्कृष्टता के साथ जोड़ना।

कठिन स्तर के प्रश्न (3-5)

1. प्रश्न: "स्वर्ग और नरक की दीवारें आपस में जुड़ी हुई हैं।" इस कथन का गहरा अर्थ क्या है? यह हमारे दैनिक जीवन पर कैसे लागू होता है?

उत्तर: इसका गहरा अर्थ है कि सुख (स्वर्ग) और दुःख (नरक) बाहरी परिस्थितियों का नहीं, बल्कि हमारे दृष्टिकोण और कर्मों का परिणाम हैं। एक ही परिस्थिति में, यदि हम स्वार्थ, अनीति और हड़पने का रास्ता चुनते हैं, तो हम नरक (आत्म-प्रताड़ना, कलह) का अनुभव करते हैं। लेकिन यदि हम सहयोग, उदारता और नैतिकता का मार्ग अपनाते हैं, तो वही परिस्थिति स्वर्ग (शांति, संतोष) बन जाती है। यह हमारे दैनिक जीवन के हर निर्णय पर लागू होता है।

2. प्रश्न: लेखक क्यों मानते हैं कि बड़े-बड़े साधनों और योजनाओं के बावजूद निराशा दूर नहीं हो रही है? परिवर्तन का वास्तविक आधार क्या होना चाहिए?

उत्तर: लेखक मानते हैं कि बाहरी साधन और योजनाएं केवल सतही उपचार हैं, जबकि समस्या की जड़ बहुत गहरी है। निराशा इसलिए दूर नहीं हो रही क्योंकि "मनःस्थिति ही परिस्थितियों की जन्मदात्री है।" जब तक लोगों की मानसिकता स्वार्थी, विध्वंसक और अनैतिक रहेगी, तब तक कोई भी योजना सफल नहीं हो सकती। परिवर्तन का वास्तविक आधार व्यक्ति की मानसिकता में आदर्शवादी और उत्कृष्टता का समावेश करना होना चाहिए।

3. प्रश्न: मनुष्य अपनी बुद्धिमत्ता और शक्ति का उपयोग किस प्रकार आत्म-विनाश के लिए कर रहा है? अध्याय से उदाहरण देकर समझाएं।

उत्तर: मनुष्य अपनी बुद्धिमत्ता का उपयोग प्रकृति को समझने और उसके साथ सामंजस्य बिठाने के बजाय उसका विनाश करने में कर रहा है। उदाहरण के लिए, वैज्ञानिक प्रगति का उपयोग ऐसे कारखाने बनाने में हो रहा है जो नदियों और हवा को जहरीला बना रहे हैं। सामाजिक स्तर पर, वह अपनी चतुराई का उपयोग दूसरों को धोखा देने और शोषण करने में कर रहा है, जिससे अविश्वास और संघर्ष का माहौल बना है। इस प्रकार, जिस बुद्धिमत्ता से विकास होना चाहिए था, उसी से वह अपने और अपनी दुनिया के विनाश का सामान तैयार कर रहा है।

कठिनतम स्तर के प्रश्न (2-3)

1. **प्रश्न:** अध्याय में वर्णित वर्तमान संकट (पर्यावरणीय, सामाजिक, व्यक्तिगत) क्या केवल बाहरी नीतियों में बदलाव से हल हो सकता है, या इसके लिए एक गहरी 'आध्यात्मिक क्रांति' की आवश्यकता है? तर्क सहित व्याख्या करें।

उत्तर: अध्याय के अनुसार, यह संकट केवल बाहरी नीतियों में बदलाव से हल नहीं हो सकता। समस्या की जड़ मनुष्य की गरिमा का पतन और उसकी चेतना में आई गिरावट है। मनुष्य भूल गया है कि उसकी कुछ नैतिक जिम्मेदारियां हैं। वह पशुओं की तरह केवल अपनी इंद्रियों और स्वार्थों के लिए जी रहा है। इसलिए, इसका समाधान एक गहरी 'आध्यात्मिक क्रांति' से ही संभव है, जिसका अर्थ है **मनःस्थिति का परिवर्तन**। जब तक व्यक्ति की सोच में उत्कृष्टता, नैतिकता और सार्वभौमिक कल्याण का भाव नहीं आएगा, तब तक कोई भी कानून या योजना स्थायी समाधान नहीं दे सकती। उसे अपनी चेतना को पशु-स्तर से उठाकर देव-स्तर पर ले जाना होगा।

2. **प्रश्न:** "क्या हम सब अगले ही दिनों सामूहिक आत्महत्या का यह विनाश आयोजित करके रहेंगे?" लेखक द्वारा उठाए गए इस भयावह प्रश्न के आलोक में, 'परिवर्तन के आधार' को खोजने की तत्काल आवश्यकता पर प्रकाश डालें।

उत्तर: लेखक का यह प्रश्न आज की स्थिति की गंभीरता को दर्शाता है, जहाँ मनुष्य के कार्य (जैसे परमाणु हथियार, जलवायु परिवर्तन) पूरी मानवता के अस्तित्व को खतरे में डाल रहे हैं। यह 'सामूहिक आत्महत्या' जैसी स्थिति है। इस विनाश को रोकने के लिए 'परिवर्तन के आधार' को खोजना तत्काल आवश्यक है। अध्याय के अनुसार, यह आधार बाहरी नहीं, आंतरिक है। यह आधार है - **मनुष्य की मानसिकता**। हमें तत्काल यह समझना होगा कि उत्पादन बढ़ाना, नई तकनीक बनाना या नई राजनीतिक व्यवस्थाएं बनाना तब तक व्यर्थ है, जब तक मनुष्य की सोच नहीं बदलती। हमें उस उल्टे प्रवाह को उलटने के लिए एक ऐसी प्रचण्ड वैचारिक शक्ति की आवश्यकता है जो लोगों को स्वार्थ से परमार्थ की ओर, विनाश से सृजन की ओर और पशुता से मानवता की ओर मोड़ सके। यही एकमात्र स्थायी समाधान है।

पुस्तक से संकलित परिभाषाएँ:

- **देवासुर संग्राम** - यह उस विग्रह या संघर्ष का नाम है जो दो पृथक मान्यताओं (भौतिकता और आध्यात्मिकता) के बीच हठपूर्ण रवैये के कारण खड़ा होता है।
- **दैत्य पक्ष की मान्यता** - यह वह मान्यता है जिसके अनुसार पदार्थ ही सब कुछ है, भावनाएँ भ्रान्ति हैं और जो प्रत्यक्ष है, वही प्रामाणिक है। इसे दर्शन की भाषा में 'भौतिकता' कहा जाता है।
- **देव पक्ष की मान्यता** - यह वह मान्यता है जिसके अनुसार भावनाएँ प्रधान हैं और पदार्थ गौण है। इसे दर्शन की भाषा में 'आध्यात्मिकता' कहा जाता है।
- **युग-धर्म** - इसका अर्थ है समय के परिवर्तन को पहचानना और उसके अनुसार अपने रीति-रिवाजों, क्रियाकलापों, और उपकरणों में आवश्यक बदलाव लाना और उसे अपनाने में आनाकानी न करना।
- **मनुष्य की वास्तविक सम्पदा** - यह उसका निजी व्यक्तित्व है, जो यदि जीवंत हो तो अपने लिए हर प्रकार की सम्पदा उत्पन्न कर सकता है।
- **भारत में बड़प्पन का अर्थ** - अपने देश में बड़प्पन का अर्थ आलस्य और अपव्यय है। जिन्हें कुछ न करने की सुविधा हो, उन्हें अमीर समझा जाता है।
- **सुव्यवस्था** - यह एक उच्चस्तरीय कलाकौशल है, जो किसी भी काम को सर्वांगपूर्ण, सुंदर, सुसज्जित और कलात्मक बनाती है।
- **शिक्षा** - इसे बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता, एकाग्रता आदि के नाम से भी जाना जाता है।
- **मनुष्य** - यह एक भटका हुआ देवता है।
- **आज की सबसे बड़ी और भयावह समस्या** - यह मानवी चेतना का परावलम्बन, अंतःस्फुरणा का मूर्छित होना और सही-गलत को न समझ पाना है।
- **सतयुग** - यह वह समय था जब साधन कम होने के बावजूद 'मिल बाँटकर खाने' की नीति के कारण समाज में अधिक प्रसन्नता और सहकारिता थी, तथा कहीं विग्रह या संकट नहीं था।
- **अनाचार की वृद्धि का कारण** - इसका एक ही कारण है - अनावश्यक सजावट, विलासिता के साधन जुटाना और संग्रह की लिप्सा से लालायित रहना।
- **मनःस्थिति ही परिस्थितियों की जन्मदात्री है** - यह एक विचारधारा है जिसके अनुसार मन की स्थिति (सोच) ही बाहरी परिस्थितियों को उत्पन्न करती है, और इसी के आधार पर साधनों का उपार्जन और सदुपयोग संभव हो पाता है।
- **मत्स्य न्याय** - यह वह स्थिति है जिसमें समर्थों के लिए असमर्थों को पीसना और असमर्थों के लिए पीसना ही नियति बन जाती है।

- **पुण्य परमार्थ** - घर के समर्थ कमाते हैं और उसी कमाई से परिवार के सभी सदस्य गुजारा करते हैं, यही सही वितरण पुण्य परमार्थ कहलाता है।
- **सभ्यता** - यह अनुशासन के परिपालन में है।
- **मानवी गरिमा के साथ जुड़ा हुआ शिष्टाचार** - इसका अर्थ है स्वयं को नीति और अनुशासन में रखना तथा दूसरों के साथ उदार व्यवहार करना।
- **सभी समस्याओं का समाधान** - इसका मात्र एक ही उपाय है कि मनःस्थिति में व्याप्त अवांछनीयता (बुराई) को पूरी तरह बहार फेंका जाये।